

मधुप गुनगुना – जयशंकर प्रसाद

मधुप गुनगुना कर कह जाता कौन कहानी अपनी,
मुरझा कर गिर रही पत्तियां देखो कितनी आज धनि.
इस गंभीर अनंत नीलिमा में अस्संख्य जीवन-इतिहास-
यह लो, करते ही रहते हैं अपना व्यंग्य-मलिन उपहास.
तब बही कहते हो-काह डालूँ दुर्बलता अपनी बीती !
तुम सुनकर सुख पाओगे, देखोगे – यह गागर रीती.
किन्तु कहीं ऐसा ना हो की तुम खली करने वाले-
अपने को समझो-मेरा रस ले अपनी भरने वाले.
यह विडम्बना! अरी सरलते तेरी हँसी उड़ाऊँ मैं.
भूलें अपनी, या प्रवंचना औरों की दिखलाऊँ मैं.
उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊँ मधुर चाँदनी रातों की.
अरे खिलखिला कार हसते होने वाली उन बाओं की.
मिला कहाँ वो सुख जिसका मैं स्वप्न देख कार जाग गया?
आलिंगन में आते-आते मुसक्या कर जो भाग गया.
जिसके अरुण-कपोलों की मतवाली सुंदर छाया मैं.
अनुरागिनी उषा लेती थी निज सुहाग मधुमाया मैं.
उसकी स्मृति पाथेय बनी है थके पथिक की पन्था की.
सीवन को उधेड़ कर देखोगे क्यों मेरी कन्था की?
छोटे-से जीवन की कैसे बड़ी कथाएं आज कहूँ?
क्या ये अच्छा नहीं कि औरों की सुनता मैं मौन रहूँ?
सुनकर क्या तुम भला करोगे-मेरी भोली आत्म-कथा?
अभी समय बही नहीं- थकी सोई है मेरी मौन व्यथा.